

सबाल पॉल

बनाम

मलिना पॉल और अन्य

13 फरवरी, 2003

[वी. एन. खरे, सीजे।, एस. बी. सिन्हा और

डॉ. ए. आर. लक्ष्मणन, जे. जे.]

पत्र पेटेंट (कलकत्ता उच्च न्यायालय):

खंड 15-अपील में उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश अन्तर्गत धारा 299 भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम- खंड पीठ के समक्ष पत्र पेटेंट अपील दायर की गई- उच्च न्यायालय द्वारा पत्र पेटेंट अपील की संधारिता के ऑब्जेक्शन खारिज किए- अवधारित एकल न्यायाधीश द्वारा अपील के पारित आदेश अन्तर्गत धारा 299 पत्र पेटेंट पीठ के समक्ष अपील योग्य था और अपील सुनवाई की योग्यता को सही तरीके से अपास्त किया गया। पत्र पेटेंट का खंड 15 किसी भी अधिनियम के तहत पारित फैसले के खिलाफ वादी को अपील करने का अधिकार प्रदान करता है। जब तक कि किसी अधिनियम के अन्तर्गत विशेष रूप से वर्जित नहीं किया जाता है- खंड 15 एक अधिनियम का विषय हो सकता है

लेकिन जब वह विशेष प्रावधान के अधीन ऐसा विषय नहीं है, तो खंड 15 के तहत उच्च न्यायालय की शक्ति और अधिकार क्षेत्र किसी निर्णय से किसी भी अपील को स्वीकार करने के लिए प्रभावी होगा- पत्र पेटेंट का खंड 15 उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा दूसरे मंच में पारित आदेश के खिलाफ अपील की अनुमति देता है भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 299.

शारदा देवी बनाम बिहार राज्य, [2002] 3 एससीसी 705; शाह बाबूलाल खिमजी बनाम जावाबेन डी. कानिया और अन्य, [1981] 4 एस.सी.सी. 8; नेशनल सेविंग थ्रेड कंपनी लिमिटेड, चिदंबरम बनाम जेम्स चैडविक और ब्रदर्स लिमिटेड, एआईआर (1953) एससी 357; महाराष्ट्र राज्य वित्तीय निगम बनाम जेसी ड्रग्स एंड फार्मास्यूटिकल्स प्रा. लिमिटेड और अन्य, [1991] 2 एस.सी.सी. 637 और प्रतापराई एन. कोठारी बनाम जॉन ब्रैगांजा, [1999] 4 एस.सी.सी. 403 पर भरोसा किया।

उपाध्याय हरगोविंद देवशंकर बनाम धीरेंद्रसिंह वीरभद्रसिंहजी सोलंकी और अन्य, एआईआर (1988) एससी 915-[1988] 2 एससीआर 1043; मैसर्स तनुश्री आर्ट प्रिंटर्स और अन्य बनाम रवीन्द्र नाथ पॉल, [2000] 2 सीएचएन 213 और (2000) 2 सीएचएन 843; भारत संघ और अन्य बनाम आराधना ट्रेडिंग कंपनी और अन्य. [2002] 4 एस.सी.सी. 447; चंद्र कांता सिन्हा बनाम ओरिएंटल बीमा कंपनी लिमिटेड और अन्य,

[2001] 6 एस.सी.सी. 158 और बृहन्मुंबई नगर निगम और अन्य बनाम भारतीय स्टेट बैंक, [1999] 1 एस.सी.सी. 123 संदर्भित।

बलवंत बनाम मैनाबाई; एआईआर (1991) मध्य प्रदेश 11; ज्योतिरेंद्र नाथ चौधरी बनाम प्रतिमा रानी देबी; आई.एल.आर. (1967) 1 कलकत्ता 278, असहमति।

न्यू केनिलवर्थ होटल (प्रा.) लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य वित्त निगम और अन्य, [1997] 3 एस.सी.सी. 462 और बलाई लाल बनर्जी और अन्य बनाम देबकी कुमार गांगुली और अन्य, ए.आई.आर. 1984 कलकत्ता 16 अवधारित लागू नहीं।

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925

धारा 299 वसीयत की प्रकृति के तहत आदेश पारित किया गया- वसीयतकर्ता का बेटा प्रोबेट के लिए आवेदन कर रहा है, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश से प्रार्थना- अपील को खारिज कर दिया। अपील अन्तर्गत धारा 299 उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के समक्ष अनुमति दी गई- पत्र पेटेंट अपील को उच्च न्यायालय की डिविजन बेंच द्वारा बनाए रखने योग्य माना गया है- धारा 299 के तहत पारित एक अंतिम आदेश उन अधिकारों और दायित्वों पर फैसला सुनाया गया जो पार्टियों के बीच बाध्यकारी है और लागू करने योग्य नहीं हो सकते हैं सख्त अर्थ में धारा 2(2) सिविल प्रक्रिया संहिता के अर्थ के भीतर एक डिक्री है, लेकिन क्या इसकी धारा

2(9) के अर्थ के भीतर एक निर्णय है- लेटर्स पेटेंट के खंड 15 के संदर्भ में प्रश्न का निर्धारण करते समय न्यायालय को यह देखना आवश्यक है जिस आदेश के खिलाफ अपील करने की मांग की गई है वह उसके अर्थ के भीतर एक निर्णय है या नहीं- एक बार जब यह पाया जाता है कि आदेश की प्रकृति के बावजूद चाहे वह अन्तरिम या अंतिम हो एक निर्णय दिया गया है, पत्रों का पेटेंट खंड 15 आकर्षित होगा। धारा 299 स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय में अपील का प्रावधान करता है- इसलिए अपील का अधिकार धारा 104 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत प्रदान नहीं किया गया है- शब्द "किसी अन्य अधिनियम द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए" 1908 में उक्त प्रावधान में जोड़े गए थे जो कि पत्र पेटेंट की प्रयोज्यता के संबंध में विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों में दिए गए मतभेदों को ध्यान में रखते हुए और कलकत्ता, मद्रास और बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसलों को प्रभावी बनाने के लिए- धारा 104 सीपीसी किसी विशेष कानून के तहत पारित आदेशों या डिक्री पर विचार नहीं करती है- सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के प्रावधानों के अनुसार शब्द धारा 299 उत्तराधिकार अधिनियम पार्टियों के किसी भी मूल अधिकार को संदर्भित नहीं करता है बल्कि एक विवादास्पद कार्यवाही में किसी पार्टी की अपील का केवल प्रक्रियात्मक भाग- अपील का अधिकार इसलिए अधिनियम की धारा 299 के प्रावधानों में ही पाया जाना चाहिए न कि धारा 104 सिविल प्रक्रिया

संहिता- धारा 104 सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 लेटर्स पेटेंट (कलकत्ता उच्च न्यायालय) खंड 15

मिस ईवा माउंटस्टेफेंस बनाम श्री हंटर गार्नेट ओर्मे, आईएलआर (1913) 35 इलाहाबाद 448; जी.एस. नय्यर बनाम श्रीमती कौशल्या रानी और अन्य, आई.एल.आर. (1974) 2 दिल्ली 5; हुरीश चंदर बनाम कैसुंदर; (1883) 9 कलकत्ता 482: 10 आई.ए. 4 और बन्नू बीबी बनाम मेहदी हुसैन, (1889) 11 इलाहाबाद 375, संदर्भित।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908"

धारा 104-यह धारा केवल कानून विशेष के तहत दी गई अपीलों को मान्यता देती है। इसलिए यह अपील का अधिकार नहीं बनाता है- यह किसी भी आगे की अपील पर भी रोक नहीं लगाता है, अगर इसके लिए उस समय लागू किसी अन्य अधिनियम के तहत प्रावधान किया गया हो- भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925 की धारा 299

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 7806/2001

उच्च न्यायालय, गुवाहाटी के 2000 के एल.पी.ए. सं. 1 में निर्णय और आदेश दिनांकित 30.8.2000 से।

संजय पारिख, सुश्री वंदना सूदन और ए. के. मिश्रा, अपीलार्थी की ओर से।

सुश्री मधु मूलचंदानी, उत्तरदाताओं की ओर से।

न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था:

इस अपील में विचार के लिए जो संक्षिप्त प्रश्न उत्पन्न होता है, वह यह कि क्या भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम (1925) (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 299 के तहत उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ एक पत्र पेटेंट की अपील हो सकती है।

जब यह मामला दो न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष आया, तो पीठ का यह विचार था कि उपरोक्त प्रश्न पर तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा विचार किया जाना आवश्यक है। इस तरह यह मामला हमारे सामने आया है।

इस अपील को जन्म देने वाले तथ्य यह हैं कि दिनांक 8.12.1986 को श्रीश चंद्र पॉल ने अपनी एक अंतिम वसीयत की। 17.03.1988 को उसकी मृत्यु हो गई अपीलार्थी जो कि श्रीश चंद्र पॉल का पुत्र है अपर जिला न्यायाधीश, अगरतला के समक्ष प्रोबेट के लिए आवेदन किया। विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने प्रोबेट देने की याचना को खारिज कर दिया इससे व्यथित होकर अपीलार्थी ने अधिनियम की धारा 299 के अन्तर्गत गुहावाटी उच्च न्यायालय में अपील दायर की, विद्वान एकल न्यायाधीश उच्च न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए वसीयत की प्रति को संलग्न करते हुए एक प्रशासनिक पत्र जारी किया, व्यथित अपीलार्थी ने पत्र पेटेंट अपील उच्च न्यायालय की पीठ के समक्ष पेश करना उचित समझा। उक्त पीठ के

समक्ष अपीलार्थी ने यहां प्रारंभिक आपत्ति जताई कि ऐसी कोई भी अपील सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 104 द्वारा वर्जित होने के कारण पेश होने योग्य नहीं है। पीठ ने आपत्ति को खारिज कर दिया और अपील की सुनवाई का निर्देश दिया। अपीलार्थी ने विशेष अनुमति द्वारा वर्तमान अपील दायर की और इस न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश के आधार पर पत्र पेटेंट अपील में सुनवाई पर रोक लगा दी गई थी।

अपीलार्थी की ओर से पेश विद्वान वकील श्री संजय पारिख ने उच्च न्यायालय के समक्ष रखी गई दलीलों को दोहराया। श्री पारिख ने प्रस्तुत किया कि अधिनियम की धारा 299 के संदर्भ में उच्च न्यायालय में अपील सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 द्वारा शासित होगी। विद्वान वकील के अनुसार, चूंकि एक विवादास्पद कार्यवाही में जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 2 (2) के अर्थ के भीतर एक डिक्री नहीं है, इसलिए अपील सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के तहत दिए गए डिक्री से नहीं होगी। इस उद्देश्य के लिए कोई औपचारिक डिक्री तैयार नहीं की जाती है और न ही इसे अपील के ज्ञापन के साथ जोड़ा जा सकता है। मामले के उस दृष्टिकोण में, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 की उप-धारा (2) खंड 15 कलकत्ता उच्च न्यायालय के पत्रों का पेटेंट के तहत अपील को पेश करने के संबंध में एक बाधा है। उक्त विवाद के समर्थन में विद्वान वकील ने बलवंत बनाम मैनाबाई एआईआर 1991 मध्यप्रदेश पर दृढ़ता से भरोसा किया। ज्योतिरेंद्र नाथ चौधरी बनाम प्रतिमा रानी देवी,

आई.एल.आर. (1967) 1 कलकत्ता 278 और बलाई लाल बनर्जी और अन्य बनाम देबकी कुमार गांगुली और अन्य, ए.आई.आर. (1984) कलकत्ता 16 वह आगे प्रस्तुत करेंगे कि पत्र पेटेंट के खंड 15 के संदर्भ में, एक अपील तब कायम रखी जा सकती है जब उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा एक मूल आदेश पारित किया जाता है और या जब एक डिक्री से उत्पन्न अपील में एक अपीलीय आदेश पारित किया जाता है न कि एक आदेश से।

विद्वान अभिभाषक के कथनानुसार उच्च न्यायालय में प्रश्नगत निर्णय विद्वान न्यायाधीश एकल पीठ, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के परिप्रेक्ष्य में ना तो निर्णय है ना ही आज्ञासि इसलिए पत्र पेटेंट अपील पेश नहीं हो सकती, अपने इन कथनों के समर्थन में इन पर विशेष बल दिया गया- शाह बाबुला खीमजी बनाम जावा बेन डी कानिया और अन्य 1981 (4) एससीसी 8 तथा न्यू केनीलवर्थ होटल (प्रा.) लिमिटेड बनाम वित्तीय निगम उड़ीसा राज्य और अन्य (1997) 3 एसएससी 462

दूसरी ओर से उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि यह प्रश्न हाल ही में इस न्यायालय के निर्णय शारदा देवी बनाम बिहार राज्य, [2002] 3 एससीसी 705 में कवर किया गया है।

यह विवादित नहीं है कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 एक विशेष अधिनियम है और इसकी धारा 299 जिला एवं सेशन न्यायाधीश

द्वारा प्रोबेट जारी करने अथवा इन्कार करने के आदेश के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के प्रावधानों के अनुसार उच्च अधिनियम की धारा 268 में प्रावधान है कि प्रोबेट और प्रशासन पत्र देने की कार्यवाही, उसमें दिए गए प्रावधानों को छोड़कर, मामले की परिस्थितियों की अनुमति के अनुसार, सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 द्वारा विनियमित की जाएगी। प्रोबेट प्रदान करने की कार्यवाही अधिनियम की धारा 276 के तहत एक आवेदन दायर करके शुरू की जाती है। जो विवरण उसमें बताया जाना आवश्यक है, वह उक्त प्रावधान में निर्दिष्ट किया गया है। अधिनियम की धारा 278 इसी तरह उस तरीके का प्रावधान करती है जिसमें प्रशासन पत्र प्रदान करने के लिए आवेदन दायर किया जाना है। धारा 283 उपधारा (1) (सी) जिला न्यायाधीश को मृतक व्यक्ति की संपत्ति में हित रखने वाले समस्त व्यक्तियों को बुलाकर प्रशस्ति पत्र जारी करने और उसके पश्चात उन्हें कार्यवाही में भाग लेने की अनुमति का अधिकार देता है। अधिनियम की धारा 284 में कैविएट दाखिल करने का प्रावधान है एक बार कैविएट दायर होने पर प्रक्रिया विवादित हो जाती है। अधिनियम की धारा 295 विवादास्पद मामलों में प्रक्रिया प्रदान करती है जबकि धारा 299 जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध अपील प्रस्तुत किए जाने की प्रक्रिया बताती है।

धारा 295 और 296 इस प्रकार है:-

295- प्रतिविरोध के मामलों में प्रक्रिया- जिला न्यायाधीश के समक्ष ऐसे किसी मामले में, जिसमें प्रतिविरोध है, कायर्वाहियां, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के उपबन्धों के अनुसार यथासंभव नियमित वाद के निकटतम रूप में होगी। जिनमें यथास्थिति प्रोबेट या प्रशासन पत्र के लिए अर्जीदार वादी होगा और वह व्यक्ति प्रतिवादी होगा जो अनुदान का विरोध करने के लिए उपसंजात हुआ है।

299- जिला न्यायाधीश के आदेश से अपीलें- जिला न्यायाधीश को इसके द्वारा प्रदत्त शक्तियों के आधार पर उसके द्वारा किए गए प्रत्येक आदेश से अपील, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अपीलों को लागू होने वाले उपबन्धों के अनुसार उच्च न्यायालय में हो सकेगी।

उपर्युक्त प्रावधान से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि विवादास्पद कार्यवाही को एक नियमित वाद की तरह नहीं माना जाएगा या जिसके आधार पर विवाद्यक विनिश्चित किए गए हैं, डिक्री निर्णय का अनुसरण नहीं करेगी परंतु दीवानी प्रक्रिया संहिता के प्रक्रियात्मक प्रावधान लागू होंगे। अधिनियम की धारा 299 में दिए गए शब्द "दीवानी प्रक्रिया संहिता 1908 में किए गए प्रावधानों के अनुसार" किसी भी पक्षकार को कोई मूलभूत अधिकार नहीं देती है यह केवल प्रक्रियात्मक भाग का उल्लेख करती है।

इसलिए, एक विवादास्पद कार्यवाही में एक पक्ष की अपील का अधिकार है: यह अधिनियम की धारा 299 के प्रावधानों में पाया जाता है न कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 में।

अधिनियम की धारा 299 में कहा गया है कि सभी आदेश जिला न्यायाधीश द्वारा पारित किए जाते हैं, अपील योग्य हैं। यद्यपि प्रत्यक्षतः, सभी आदेश अपील योग्य हैं। यद्यपि विभिन्न अधिकारिताओं में दिए गए निर्णय उसमें निहित अंतर्निहित सीमाओं को इंगित करते हैं।

यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने मिस ईवा माउंटस्टेफेंस बनाम मिस्टर हंटर गार्नेट ओर्मे, आई.एल.आर. (1913) 35 इलाहाबाद, 448 अभिनिर्धारित किया कि वसीयत की एक प्रति के साथ प्रोबेट और प्रशासन के पत्रों के अनुदान के लिए एक विवादास्पद कार्यवाही में पारित आदेश एक डिक्री होगी। हालाँकि, कुछ अन्य उच्च न्यायालयों ने इसके विपरीत दृष्टिकोण अपनाया है। जी.एस.नैयर बनाम श्रीमती कौशल्या रानी और अन्य, आई.एल.आर. (1974) 2 दिल्ली 5.

यह और भी विवादास्पद है कि कुछ उच्च न्यायालयों जिनमें इलाहाबाद उच्च न्यायालय, बोम्बे, मद्रास, राजस्थान और पटना उच्च न्यायालयों ने एक औपचारिक डिक्री तैयार करने की प्रक्रियाओं को अपनाया गया है। लेकिन कुछ अन्य न्यायालयों में ऐसी प्रक्रिया नहीं अपनाई गई है।

अधिनियम की धारा 299 के तहत दायर अपील में देय न्यायालय शुल्क की राशि के संबंध में विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णय भी भिन्न हैं।

उपरोक्त संदर्भ में, सवाल यह है कि क्या भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के तहत एक अपीलीय कार्यवाही में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के प्रावधान पर विचार किया जाना आवश्यक है।

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 में यह प्रावधान है कि एक अपील उसमें विनिर्दिष्ट आदेशों से निहित होगी और संहिता के मुख्य भाग में या उस समय लागू किसी कानून द्वारा अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए आदेशों को छोड़कर, किसी अन्य आदेशों से संबंधित नहीं होगा:

" (च) धारा 35 ए के तहत एक आदेश:

(एफ.एफ.ए.) धारा 91 या धारा 92 के तहत दावा संस्थित करने की अनुमति देने से इनकार करने का आदेश जो धारा 91 या धारा 92 में संदर्भित प्रकृति का हैं

(छ) धारा 95 के तहत एक आदेश:

(ज) इस संहिता के किसी भी प्रावधान के तहत जुर्माना लगाने का आदेश। या किसी व्यक्ति की सिविल जेल में गिरफ्तारी या निरोध का निर्देश देना। सिवाय इसके कि ऐसी गिरफ्तारी या निरोध किसी डिक्री के निष्पादन में है:

(i) नियमों के तहत किया गया कोई आदेश जिससे स्पष्ट रूप से अपील की जाती है।

बशर्ते कि इसमें खंड (एफ. एफ.) में निर्दिष्ट किसी आदेश के खिलाफ कोई अपील नहीं होगी जहां किसी राशि के भुगतान के लिए या तो कोई आदेश दिया ही नहीं गया या कम राशि के लिए दिया गया हो।

यह विवादित नहीं है कि अधिनियम की धारा 299 स्पष्ट रूप से एक उच्च न्यायालय में अपील का प्रावधान करती है। इसलिए, अपील का अधिकार सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के तहत प्रदान नहीं किया गया है। पत्र पेटेंट की प्रयोज्यता के संबंध में विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों में दिए गए विचारों के अंतर को ध्यान में रखते हुए 1908 में उक्त प्रावधानों में "किसी अन्य अधिनियम द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए शब्दों को छोड़कर" शब्द जोड़े गए थे। कलकत्ता, मद्रास और बॉम्बे के उच्च न्यायालयों ने प्रिवी काउंसिल के फैसलों चंदर बनाम कैसुंदर, (1883) 9 कलकत्ता 482: 10 आई.ए. 4 का अनुसरण कर अभिनिर्धारित किया कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 588, जैसा कि तब थी, पत्र पेटेंट के खंड 15 की अधिकारिता को नहीं छीनती है, जबकि इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने बन्नू बीबी बनाम मेहदी हुसैन, (1889) 11 इलाहाबाद 375 इसके विपरीत रखा। इसलिए कलकत्ता, मद्रास और बॉम्बे उच्च न्यायालयों के

फैसलों को प्रभावी बनाने के लिए इन शब्दों को 1908 के अधिनियम में जोड़ा गया था।

क्या विधानमंडल का इरादा यह था कि अधिनियम की धारा 299 के तहत अपील की जाए वह सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों द्वारा शासित हो, तो विधानमंडल उस भाषा का उपयोग कर सकता था जैसा कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 28 में किया गया है, जिसमें यह प्रावधान किया गया है कि अधिनियम के तहत पारित सभी आज्ञासि और आदेशों के खिलाफ उस समय प्रवृत्त किसी भी कानून के तहत अपील की जा सकती है।

यह कहना अलग बात है कि कोई डिक्री तैयार नहीं की गई है, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 नियम 1 में अपील प्रस्तुत करने की प्रक्रिया का प्रावधान है जो लागू नहीं होगा इसलिए डिक्री की प्रति अपील के साथ संलग्न करने की आवश्यकता नहीं है परंतु यहां यह दूसरी बात है कि अपील करने का अधिकार सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 में स्वयं में ही दिया गया है। सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 उन मामलों को निर्दिष्ट करती है जो अपील योग्य हैं और कोई अन्य नहीं। सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आदेशों की अपील के लिए धारा 104 और आदेश 43 नियम 1 में प्रावधान किया गया है। उक्त प्रावधानों में अपील

योग्य आदेश की एक पूरी सूची है- यह किसी विशेष क़ानून के तहत पारित आदेश या डिक्री पर विचार नहीं करता है।

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के कारण विशेष क़ानून में अपील को सुरक्षा प्रदान की गई है। सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के सामान्य पाठ से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि अपील केवल अपीलीय आदेशों की ही होगी अन्य किसी आदेश की नहीं जब तक कि सिविल प्रक्रिया संहिता में और तत्समय प्रवृत्त किसी क़ानून में ऐसा प्रावधान नहीं हो। संहिता की धारा 104 केवल विशेष क़ानून के तहत प्रदान की गई अपीलों को मान्यता देती है। यह इस तरह से अपील का अधिकार नहीं बनाता है। इसलिए यह किसी भी आगे की अपील पर भी रोक नहीं लगाता है, यदि उसी के लिए किसी अन्य अधिनियम के तहत प्रावधान किया गया है, जो अभी लागू है। जब भी क़ानून इस तरह के प्रतिबंध का प्रावधान करता है, तो इसे इतना स्पष्ट रूप से कहा जाता है जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100ए से दिखाई देगा।

यदि अधिनियम के तहत अपील का अधिकार प्रदान किया गया है तो अधिनियम में इसकी सीमा अवधि भी प्रदान की गई है। पत्र पेटेंट के तहत प्रदान किए गए अपील के अधिकार को प्रतिबंधित नहीं कहा जा सकता है। क़ानून में किसी भी प्रावधान के अभाव में अपील के अधिकार की सीमा का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। अब यह

अच्छी तरह से तय हो गया है कि किसी उच्चतर न्यायालय की अपीलीय अधिकारिता को केवल इसलिए बहिष्कृत नहीं किया गया है क्योंकि अधीनस्थ न्यायालय अपने विशेष अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है। जी.पी. सिंह के 'सांविधिक व्याख्या के सिद्धांत' में कहा गया है कि

"उच्चतर न्यायालयों की अपीलीय और पुनरीक्षण अधिकारिता को केवल इसलिए बहिष्कृत नहीं किया जा सकता है कि अधीनस्थ न्यायालय द्वारा विशेष अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया गया है, इसका कारण यह है कि जब विशेष अधिनियम उस अधिनियम द्वारा प्रशासित मामलों में स्थापित न्यायालयों को क्षेत्राधिकार प्रदान करता है, जो नामोदिष्ट व्यक्ति से भिन्न है, समय सीमा की बाध्यता के बिना, तब उस न्यायालय की सामान्य प्रक्रिया जिसमें अपील, पुनरीक्षण के सामान्य अधिकार समाहित हैं, उसके निर्णय को प्रभावित करेगा।"

लेकिन उपरोक्त नियम का एक अपवाद उन मामलों पर है जहां विशेष अधिनियम एक स्व-निहित संहिता निर्धारित करता है, जिसमें सामान्य विधि प्रक्रिया की प्रयोज्यता को निहित रूप से बाहर रखा जाएगा। देखें उपाध्याय हरगोविंद देवशंकर बनाम धीरेंद्रसिंह वीरभद्रसिंहजी सोलंकी और अन्य, एआईआर (1988) एससी 915:[1988] 2 एससीआर 1043।

यह उपरोक्त पृष्ठभूमि में उन निर्णयों पर निर्भर है जिन पर श्री पारिख द्वारा विश्वास किया गया है।

बलवंत बनाम मैनाबाई का मामला (ऊपर), विद्वान एकल न्यायाधीश मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय इस सवाल पर विचार कर रहा था कि क्या एक मिश्रित अपील बनाए रखने योग्य होगी। इसने सवाल का फैसला नहीं किया कि एक अपील केवल सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के तहत होगी, लेकिन केवल यह अभिनिर्धारित किया कि एक मिश्रित अपील इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए बनाए रखने योग्य होगी कि धारा 299 के तहत एक अपील एक जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के खिलाफ है।

ज्योतिंद्र नाथ चौधरी के मामले (ऊपर) में, एक सवाल उठा कि क्या प्रशासक की नियुक्ति का आदेश अपील योग्य होगा। न्यायाधीश सेन, जो उस समय थे ने कहा:

"भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम कुछ समय के लिए लागू कानून है। इस अधिनियम की धारा 299 में कहा गया है कि जिला न्यायाधीश द्वारा दिया गया प्रत्येक आदेश जो अधिनियम द्वारा उसे प्रदत्त शक्तियों के आधार पर पारित किया गया है उच्च न्यायालय में अपील योग्य है। हालांकि इस तरह का आदेश धारा 104 सिविल प्रक्रिया संहिता की परिधि में नहीं आता है। क्योंकि भारतीय उत्तराधिकार

अधिनियम स्पष्ट रूप से अन्यथा प्रावधान करता है। दूसरे शब्दों में, ऐसा आदेश धारा 104 के खंडों के भीतर आता है।"

इस निर्णय को इस बात के लिए प्राधिकृत नहीं कहा जा सकता है कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 299 के तहत एक अपील सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के तहत स्पष्ट रूप से प्रदान की गई एक अपील होगी।

उस मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय इस प्रश्न से संबंधित था कि, इस बारे में कि क्या कोई अपील विचारणीय होगी या नहीं, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आदेश एक अंतर्वर्ती था और मामले के उस दृष्टिकोण से उक्त निर्णय को तत्काल मामले में कोई आवेदन नहीं कहा जा सकता है।

बलाई लाल बनर्जी के मामले (ऊपर) में, फिर से एक सवाल उठा कि प्रोबेट देने का आदेश या प्रशासन के पत्र एक डिक्री है या नहीं। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि चूंकि एक औपचारिक डिक्री तैयार करने की आवश्यकता नहीं थी, इसलिए इसे अपील के ज्ञापन की प्रति के साथ संलग्न करने की आवश्यकता नहीं है।

विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों से पता चलता है कि मामले के विभिन्न पहलुओं पर विभिन्न मत हैं, जैसे कि पारित आदेश

की प्रकृति, अपनाई जाने वाली प्रक्रिया, उच्च न्यायालय के पत्र पेटेंट की प्रयोज्यता, अपील ज्ञापन पर देय न्यायालय शुल्क की राशि आदि।

इस तथ्य के बावजूद कि अधिनियम की धारा 299 में कहा गया है कि सभी आदेश अपील योग्य होंगे, उच्च न्यायालयों का ध्यान इस कानून को निर्धारित करने में लगा हुआ था कि क्या कोई अंतर्वर्ती आदेश भी अपील योग्य होगा या नहीं और/या उसके संबंध में अपील न्यायालय की अधिकारिता की सीमा या उसके लिए लागू प्रक्रिया।

अधिनियम की धारा 299 के तहत पारित आदेश एक अंतर्वर्ती आदेश, पक्षों के अधिकारों का निर्धारण करने का आदेश या अंतिम आदेश हो सकते हैं। जब किसी विवादास्पद वाद में अंतिम आदेश पारित किया जाता है, जैसा कि अधिनियम की धारा 295 में निहित प्रावधानों से स्पष्ट होगा। सिविल प्रक्रिया संहिता की प्रक्रियाओं का पॉलन करना आवश्यक है। इसलिए, एक अंतिम आदेश पक्षकारों के अधिकारों और दायित्वों का निर्धारण करने का, जो पक्षकारों पर बाध्यकारी हो, फिर चाहे वह आदेश धारा 2(2) सिविल प्रक्रिया संहिता की परिभाषा में पूर्णतः डिक्री के अर्थ में न हो लेकिन वह धारा 2(9) के अर्थ में निर्णय अवश्य है।

पत्र पेटेंट के खंड 15 के संबंध में प्रश्न का निर्धारण करते समय अदालत को यह देखने की आवश्यकता है कि जिस आदेश के खिलाफ अपील करने की मांग की गई है, वह उसके अर्थ के भीतर एक निर्णय है

या नहीं। एक बार यह अभिनिर्धारित हो जाता है कि आदेश की प्रकृति की परवाह किए बिना, जिसका अर्थ है कि अंतर्वर्ती या अंतिम, एक निर्णय दिया गया है, पत्र पेटेंटों का खंड 15 आकर्षित किया जाएगा।

शाह बाबूलाल खिमजी के मामले (ऊपर) में सुप्रीम कोर्ट ने खंड 15 के अर्थ के भीतर 'निर्णय' शब्द पर एक बहुत ही संकीर्ण व्याख्या की।

इस अदालत ने कहा:

"एक अदालत के लिए कानूनी शब्द की व्याख्या करना उचित नहीं है जो 'निर्णय' शब्द के पूर्ण विरूपण के समान है, ताकि वास्तविक शिकायतों वाले वादियों को अन्यायपूर्ण आदेशों के खिलाफ भी अपील से वंचित किया जा सके, ताकि कष्टप्रद अपीलों की रक्षा की आड़ में उन्हें बली का बकरा बनाया जा सके ऐसे मामलों में एक उचित संतुलन बनाया जाना चाहिए ताकि कानून के उद्देश्य को आगे बढ़ाया जा सके और यदि संभव हो तो वादियों को वांछित राहत दी जा सकें।"

शाह बाबूलाल खिमजी के मामले (ऊपर) में, शीर्ष अदालत ने बिना किसी अनिश्चित शब्दों के विशेष अधिनियम के तहत फैसले का उल्लेख किया है, जो ट्रायल जज द्वारा एक बड़ी पीठ को पारित आदेश से आंतरिक अपील में भी उच्च न्यायालय को अतिरिक्त क्षेत्राधिकार प्रदान करता है।

पत्रों के पेटेंट में कानून की शक्ति यह अब अछूता मामला नहीं है पत्रों का पेटेंट का खंड 15 किसी भी अधिनियम के तहत पारित किसी भी फैसले के खिलाफ वादी को अपील का अधिकार प्रदान करता है जब तक कि उसे स्पष्ट रूप से बाहर नहीं रखा जाता है खंड 15 किसी अधिनियम के अधीन हो सकता है लेकिन जब यह विशेष प्रावधान के अधीन नहीं है तो खंड 15 के तहत किसी निर्णय के खिलाफ किसी भी अपील पर विचार करने की उच्च न्यायालय की शक्ति और क्षेत्राधिकार प्रभावित होगा।

इस मामले की जांच दूसरे नजरिए से भी की जा सकती है।

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 की उप-धारा (2) में प्रावधान है कि इस धारा के तहत अपील में पारित किसी भी आदेश पर कोई अपील नहीं की जाएगी। इससे यह भी पता चलता है कि यदि अपील किसी अन्य कानून के तहत प्रदान की गई है, तो सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 का कोई अनुप्रयोग नहीं होगा।

शाह बाबूलाल खिमजी के मामले (ऊपर) में इस न्यायालय के निर्णय पर कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक विशेष पीठ मैसर्स तनुश्री आर्ट प्रिंटर्स और अन्य बनाम रविन्द्रनाथ पॉल [2000] 2 सीएचएन 213 और 2000 (2) सीएचएन 843 में कुछ विवरणों पर विचार किया गया है। यह बताया गया था:

"यदि अपील का अधिकार एक कानून प्रदत्त अधिकार है तो यह उक्त कानून द्वारा शासित होगा। पत्रों के पेटेंट के खंड 15 के तहत अपील कायम रहेगी या नहीं, जब मामला एक विशेष कानून द्वारा शासित हो, तो यह भी उसकी योजना से तय होगा (उदाहरण के लिए रोक की अनुपस्थिति के बावजूद, एक पत्रों के पेटेंट अपील लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के तहत दिए गए विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले से सुनवाई योग्य नहीं होगी)"

यह बताया गया था कि शाह बाबूलाल खिमजी के मामले (ऊपर) में इस कोर्ट ने तीन प्रश्न पूछे:

"(1) क्या पत्रों के पेटेंट के खंड 15 के मध्यनजर सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के तहत अपील की जाएगी?
(2) क्या पत्रों के पेटेंट का खंड 15 सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 43 नियम 1 पर प्रभावी होगा? (3) यहाँ तक कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 लागू नहीं होती हो, क्या निषेधाज्ञा देने या रिसीवर नियुक्त करने से इन्कार करने वाला आदेश पत्रों के पेटेंट के खंड 15 के अर्थ में एक निर्णय होगा?"

सर्वोच्च न्यायालय ने उनमें से प्रत्येक का अलग-अलग दृष्टिकोण से उत्तर दिया:

(क) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104, आदेश 43 नियम 1 के साथ पढ़ी गई, स्पष्ट रूप से आदेश 43 नियम 1 के विभिन्न खंडों के तहत आने वाले आदेशों के खिलाफ उच्च न्यायालय की एक बड़ी पीठ में पत्र पेटेंट क्षेत्राधिकार को बिना किसी परेशानी हस्तक्षेप व अधिभावी के अधिकृत करती है।

(ख) धारा 117 और आदेश 49 नियम 3 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता का, जो विभिन्न अन्य प्रावधानों को उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से बाहर रखता है, यह सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 43 नियम 1 को बाहर नहीं करता है।

(ग) धारा 104 सपठित आदेश 43 नियम 1 और पत्रों के पेटेंट के तहत अपील के बीच कोई असंगतता नहीं है क्योंकि पत्रों का पेटेंट किसी भी तरह से आदेश 43 नियम 1 के साथ पढ़ी गई धारा 104 के तहत आवेदन को बाहर नहीं करता है या अधिभावी नहीं करता है, जो दर्शाता है कि, यह प्रावधान उच्च न्यायालय के भीतर आन्तरिक अपीलों में लागू नहीं होगा।

कलकत्ता में उच्च न्यायालय की स्थापना करने वाले पत्रों के पेटेंट को गुवाहाटी उच्च न्यायालय तक विस्तारित किया गया है उक्त पत्र पेटेंट का खंड 15 निम्नानुसार प्रदान करता है:

"मूल क्षेत्राधिकार वाले न्यायालयों से उसके अपीलीय क्षेत्राधिकार में उच्च न्यायालय में अपील- और हम आगे यह भी निर्धारित करते हैं कि निर्णय (अपीलीय क्षेत्राधिकार में पारित निर्णय नहीं होने) के खिलाफ बंगाल के फोर्ट विलियम में उक्त न्यायिक उच्च न्यायालय में अपील की जाए उक्त उच्च न्यायालय के अधीक्षण के अधीन किसी न्यायालय द्वारा अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग में किए गए डिक्री या आदेश के संबंध में क्षेत्राधिकार और पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में दिया गया आदेश नहीं है, और पारित या बनाया गया वाक्य या आदेश नहीं है भारत सरकार अधिनियम की धारा 107 के प्रावधानों के तहत अधीक्षण की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, या आपराधिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग में) उक्त उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश या किसी डिवीजन कोर्ट के एक न्यायाधीश, सरकार की धारा 108 के अनुसार भारत अधिनियम, और इसके पहले किसी भी प्रावधान के बावजूद, फरवरी 1929 के पहले दिन या उसके बाद, भारत सरकार अधिनियम की धारा 108 के अनुसार, अपील उक्त उच्च न्यायालय या किसी डिवीजन कोर्ट के एक न्यायाधीश के समक्ष की जाएगी। उक्त उच्च न्यायालय के अधीक्षण के अधीन किसी न्यायालय

द्वारा अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग में किए गए डिक्री या आदेश के संबंध में अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग, जहां निर्णय पारित करने वाला न्यायाधीश घोषणा करता है कि मामला अपील के लिए उपयुक्त है; लेकिन उक्त उच्च न्यायालय या ऐसे डिवीजन कोर्ट के न्यायाधीशों के अन्य निर्णयों के खिलाफ अपील का अधिकार हमें, हमारे उत्तराधिकारियों या हमारे या उनके प्रिवी काउंसिल के उत्तराधिकारियों को होगा, जैसा कि इसके बाद प्रदान किया गया है।"

इस प्रकार खंड 15 उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के खिलाफ दूसरे फोरम में अपील की अनुमति देता है।

नेशनल सेविंग थ्रेड कंपनी लिमिटेड चिदंबरम बनाम जेम्स चैडविक एंड ब्रदर्स लिमिटेड ए.आई.आर. (1953) एस.सी. 357 के मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जहां उच्च न्यायालय का एकल न्यायाधीश धारा 76 ट्रेड मार्क अधिनियम के अन्तर्गत अधिकारों का प्रयोग करते हुए कोई निर्णय पारित करता है तो पत्र पेटेंट अपील प्रायोज्य है, महाराष्ट्र राज्य वित्तीय निगम बनाम जे.सी. ड्रग्स एण्ड फार्मास्यूटिकल प्रा. लिमिटेड और अन्य (1991) 2 एस.सी.सी 637 के मामले में इस न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय का पॉलन किया गया।

भारत संघ और अन्य बनाम आराधना ट्रेडिंग कंपनी और अन्य [2002] 4 एस.सी.सी. 447 के मामले में इस न्यायालय ने नेशनल सिलाई थ्रेड कंपनी के मामले में (ऊपर) का जिक्र करते हुए इसे इस आधार पर अलग किया कि मध्यस्थता अधिनियम के तहत अपील से संबंधित एक विशिष्ट प्रावधान मौजूद है।

न्यू केनिलवर्थ होटल (प्रा०) लिमिटेड (ऊपर) में, इस न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39 नियम 1 के तहत अपील में उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश पर विचार किया गया इसलिए उस मामले में, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 स्पष्ट रूप से आकर्षित होती थी। हालाँकि, न्यायालय ने कहा

"तब सवाल यह है कि क्या इस तरह के निषेध के बावजूद अपीलीय क्षेत्राधिकार में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा आदेश 39 नियम 1 के तहत निषेधाज्ञा का पारित आदेश एक निर्णय है। जैसा कि शाह बाबूलाल खिमजी बनाम जयाबेन डी. कनिया में इस न्यायालय द्वारा आयोजित किया गया था इसके आधार पर अपील की जाएगी। यह तर्क दिया गया है कि अपील डिविजन बेंच के पास जाएगी हमें इस तर्क में कोई बल नहीं लगता है, यह सच है कि विद्वान डिविजन बेंच के न्यायाधीशों के साथ साथ उच्च न्यायालय की पूर्ण

बेंच भी शामिल है ने माना कि शाह बाबूलाल खिमजी मामले में विद्वान न्यायाधीशों के विश्लेषण के आईटम (ii) को आकर्षित करेगा और इसलिए अपील डिविजन बेंच में की जाएगी। हमारा विचार है कि विद्वान न्यायाधीश, उचित सम्मान के साथ, शाह बाबूलाल खिमजी मामले में फैसले के दायरे को उसके उचित परिप्रेक्ष्य में नहीं समझा है इसमें उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने उच्च न्यायालय के मूल क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए आदेश 40 नियम 1 के प्रार्थना पत्र में रीसिवर नियुक्त करने व आदेश 39 नियम 1 के अन्तर्गत निषेधाज्ञा बाबत आदेश पारित किया।"

उक्त निर्णय हस्तगत मामले में लागू नहीं है क्योंकि उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश एक विशेष कानून के तहत प्रदान की गई अपीलीय शक्ति का प्रयोग कर रहे थे, न कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 104 के तहत। न्यू केनिलवर्थ (ऊपर) को चंद्र कांत सिन्हा बनाम आेरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य [2001] 6 एस.सी.सी.158 द्वारा अंतर किया गया था और उसमें नेशनल सिलाई थ्रेड कंपनी के मामले (ऊपर) पर यह कहते हुए भरोसा किया गया था:

"हालाँकि, उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि धारा 10 में प्रावधान है कि अपील केवल अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग में पारित निर्णय के आधार पर, न कि अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग में पारित निर्णय के आधार पर उक्त उच्च न्यायालय में की जाएगी। चूंकि विद्वान एकल न्यायाधीश का निर्णय अपीलीय क्षेत्राधिकार में पारित किया गया था, एक पत्र पेटेंट अपील सुनवाई योग्य नहीं थी। हमारे विचार में विद्वान अभिभाषक का तर्क खंड 10 की गलत व्याख्या पर आधारित है। उन्होंने महत्वपूर्ण शब्दों की अनदेखी की है अर्थात् "उक्त उच्च न्यायालय के अधीक्षण के अधीन एक न्यायालय द्वारा अपीलीय क्षेत्राधिकार के अभ्यास में किए गए डिक्री या आदेश के संबंध में" जो खंड 10 के पहले अंग में है। यदि उन शब्दों को विद्वान अभिभाषक द्वारा भरोसा किए गए शब्दों के साथ ही पढ़ा जाता है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उसमें उल्लेखित अपीलीय क्षेत्राधिकार धारा 100 सिविल प्रक्रिया संहिता (या किसी विशेष अधिनियम के किसी प्रावधान) के तहत दूसरी अपील को संदर्भित करता है जो पहली अपील में अपीलीय क्षेत्राधिकार के अभ्यास में किए गए डिक्री या आदेश के संबंध में है जो उच्च न्यायालय के परिवेक्षण के अधीन एक अदालत द्वारा

धारा 96 सिविल प्रक्रिया संहिता (या किसी विशेष अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान के तहत) दूसरी अपील में एक न्यायाधीश द्वारा पारित फैसले से कोई भी पत्र पेटेंट अपील उच्च न्यायालय में नहीं होगी, बशर्ते कि दूसरी अपील किसी जिला न्यायाधीश या अधीनस्थ न्यायाधीश या उच्च न्यायालय के अधीक्षण के अधीन कोई अन्य न्यायाधीश के द्वारा कोई डिक्री या आदेश धारा 96 सिविल प्रक्रिया संहिता या किसी विशेष अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान के तहत पहली अपील में पारित किया गया।"

आगे कहा गया:

"न्यू केनिलवर्थ होटल (प्रा.) लिमिटेड मामले में आदेश 39 नियम 1 और 2 के तहत पारित ट्रायल कोर्ट के आदेश से व्यथित होकर आदेश 43 नियम 1 (आर) के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 104 (1) सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर की गई थी जिसे उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा निपटाया गया था। एकल न्यायाधीश के आदेश/निर्णय से पत्र पेटेंट खंड 10 के तहत डिविजन बेंच के समक्ष एक पत्र पेटेंट अपील (दूसरी अपील) उड़ीसा उच्च न्यायालय में दायर की गई थी उच्च

न्यायालय की डिविजन बेंच ने माना कि पत्र पेटेंट अपील सुनवाई योग्य नहीं थी। धार 104 (2) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए डिविजन बेंच के समक्ष अपील बाधित थी। इस न्यायालय में अपील पर यह अवधारित किया गया था (एस.सी.सी. पृष्ठ 466 पैरा 10)।”

“जैसा कि पहले माना गया था अपील का अधिकार कानून द्वारा प्रदत्त अधिकार है और कानून ने धारा 104 की उप धारा 2 के तहत दूसरी अपील दायर करने पर स्पष्ट रूप से रोक लगा दी है। लेटर्स पेटेंट के खंड 10 के तहत प्रदान किया गया अपील का अधिकार उपलब्ध नहीं होगा। इसलिए न्यू केनिलवर्थ होटल (प्रा.) लिमिटेड मामले में इस न्यायालय के फैसले पर निर्भरता से उत्तरदाताओं को कोई फायदा नहीं होगा।”

हम देख सकते हैं कि बृहमुंबई नगर निगम और अन्य बनाम भारतीय स्टेट बैंक [1999] 1 एस.सी.सी. 123, में इस न्यायालय ने बॉम्बे नगर निगम अधिनियम, 1888 की धारा 218-डी और 217 (1) के प्रावधानों की व्याख्या करते हुए माना कि जब कोई अपील दूसरी अपील के रूप में होती है तो सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100ए में निहित रोक को ध्यान में रखते हुए आगे कोई अपील नहीं की जाएगी। यह देखा गया:

"यह धारा किसी निर्णय की अंतिमता में देरी को कम करने के लिए पेश की गई है उपरोक्त प्रावधान के लागू होने से पहले पत्र पेटेंट के तहत कुछ मामलों में दूसरी अपील में एकल न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ अपील की जाती थी जो उचित मानी जाती थी हालांकि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत तथ्य के निष्कर्षों में हस्तक्षेप के खिलाफ कुछ निषेध था ऐसी अपील का सहारा लेने का अधिकार सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100-ए द्वारा छीन लिया गया है। चूंकि अधिनियम की धारा 217 (1) के तहत एक अपील दूसरे फोरम/अदालत में पहली अपील है और अधिनियम की धारा 218 डी के तहत एक अपील तीसरे फोरम/अदालत में दूसरी अपील है सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100-ए के मध्यनजर आगे की अपीले चौथे फोरम/अदालत के समक्ष नहीं की जा सकेगी।"

प्रतापराय एन. कोठारी बनाम जॉन ब्रैगांजा, [1999] 4 एस.सी.सी. 403 में यहाँ तक कि कब्जे के लिए एक मुकदमे में जो केवल स्वामित्व पर आधारित नहीं था, एक पत्र पेटेंट अपील को बनाए रखने योग्य माना गया था।

शारदा देवी बनाम बिहार राज्य, [2002] 3 एस.सी.सी. 705 में भी इस न्यायालय का निर्णय उसी प्रभाव का है, जिसमें पैरा 9 में यह कहा गया था:

"एक पत्र पेटेंट वह चार्टर है जिसके तहत उच्च न्यायालय की स्थापना की जाती है पत्र पेटेंट के तहत एक उच्च न्यायालय को दी गई शक्तियाँ एक उच्च न्यायालय की संवैधानिक शक्तियों के समान है। इस प्रकार जब एक पत्र पेटेंट पत्र उच्च न्यायालय को एकल न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ अपील की शक्ति प्रदान करता है, अपील पर विचार करने का अधिकार इसे तब तक बाहर नहीं किया जाएगा जब तक संबंधित अधिनियम में पत्र पेटेंट के तहत अपील को बाहर नहीं किया जाता है।"

भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 की धारा 54 में उच्च न्यायालय के समक्ष और उसके बाद उच्चतम न्यायालय में अपील का प्रावधान है और इसके बावजूद यह माना गया कि खंड 15 के तहत एक पत्र पेटेंट अपील कायम रखने योग्य होगी।

उपरोक्त कारणों से हमारा मानना है कि एकल न्यायाधीश के द्वारा जो आदेश पारित किया गया है, लेटर पेटेंट बेंच में अपील योग्य था और अपील की विचारणीयता की आपत्ति के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा

उचित रूप से खारिज कर दिया गया था। परिणामतः, यह अपील झूठी हो जाती है और तदनुसार खारिज की जाती है। हम निर्देशित करते हैं कि उच्च न्यायालय पत्र पेटेंट अपील पर शीघ्रता से निर्णय करे।

अपील खारिज कर दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी **अल्का शर्मा** (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।